International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

अगस्त 2015 – अप्रैल 2016

कामकाजी नारी: एक अवलोकन

डॉ0 सुनीता (हिन्दी प्रवक्ता)
पी.के.एस.डी. कॉलेज, कनीना

समाज एक विशेष प्रकार की व्यवस्था का नाम हैं। जिसमें पुरूष और नारी सृष्टि के आधार हैं। इस सृष्टि में दोनों की सत्ता समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। सृष्टि ने दोनों को समान महत्व प्रदान कर विभिन्न गुणों से युक्त किया है। इनके अपने अलग–अलग गुण एक तरफ तो इनका अलग–अलग महत्व प्रतिपादित करते हैं तो दूसरी तरफ एक दूसरे के पूरक भी बनाते हैं। एक–दूसरे के साथ बिना ये अधूरें हैं। परन्तु समाज विशेष की व्यवस्था के अनुरूप इनके महत्व को प्रतिपादित किया जाने लगता है। जिसके कारण इनके महत्व में असंतुलन का भाव आ जाता है। जिसका उदाहरण हम अपने भारतीय समाज का ले सकते हैं। पितृसत्तात्मक एवं पुरूष प्रधान भारतीय समाज में लम्बें समय से इसी तथ्य के आधार पर नारी को दोयम दर्जे पर रखा गया। एक लम्बे समय तक नारी की स्थिति अत्यंत दयनीय और दासों के समान थी। लेकिन समय के साथ–साथ आधुनिक विचारकों का ध्यान भी इस दशा पर गया। उन्होने नारी की इस स्थिति व दर्द को महसूस किया। इस दिशा में भारतीय समाज में 19वीं सदी अत्यंत महत्वपूर्ण है। जब अनेकानेक समाज सुधारकों ने नारी की स्थिति में सुधार के लिए अनेक सुधारवादी आन्दोलन चलाए। जिसके परिणाम स्वरूप नारी की स्थिति में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए। स्वीधीनता के पश्चात भारतीय संविधान में भी सन् 1956 में पारित हिन्दू कोड बिल में स्त्री–पुरूष समानाधिकारों की घोषणा की। कहा जा सकता है कि आधुनिक युग में उन्नति और विकास की धारा में स्त्री के प्रति नयी चेतना विकसित हुई है। भारत में स्त्री स्वतंत्रता की अवधारणा स्वाधीनता

आन्दोलन के साथ जुड़ी हुई है। इस समय नारी अपनी बेड़ियों को तोड़कर एक रूप में एक नई भूमिका निभाने के लिए प्रतिबंद्ध हुई।

पश्चिमी प्रभाव, आर्थिक दवाब अथवा बढ़ती हुई महंगाई के कारण वह कामकाज की ओर प्रवृत्त हुई। सन् 60 के बाद इस दिशा में भारतीय समाज में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए। यहीं से नारी का आज का कामकाजी स्वरूप सामने आया, ऐसी नहीं है कि इससे पहले नारी बाहर ही नहीं निकलती थी कोई काम उससे कभी किया ही नहीं क्योंकि इतिहास पर दृष्टि डालने पर पातें हैं कि जनजातियों में स्त्रियॉ प्रारम्भ से ही घर के बाहर काम करती थीं और आज भी करती हैं लेकिन आज की कामकाजी का स्वरूप आधुनिकता की ही देन माना जाता है। जिसे हम इस तरह से प्रतिपादित कर सकते है कि वह नारी जो अपने काम व श्रम के बदले अर्थ के रूप में प्रतिदेय प्राप्त करती है। कामकाजी नारी को कामकाज से समाज में समान दर्जा तथा स्वतंत्र सामाजिक अस्तित्व मिला। इस कारण आज नारी के अर्थांजन करने के प्रति समाज और परिवार का दृष्टिकोण पूर्णतः बदल रहा है। ''निस्संदेह इतनी संख्या में विवाहित नारियों का बिना विरोध के नौकरी कर सकने का मुख्य कारण यह है कि आज समाज के सभी वर्ग आर्थिक समस्या को समझने लगे हैं कि परिवार के रहन–सहन का स्तर बनाए रखने के लिए पत्नी की कमाई बहुत अनिवार्य हो जाती है।''(1)

डॉ0 अनिल गोयल ने कामकाजी नारी की परिभाषा इस प्रकार दी है– ''दफ्तरों में काम करने वाली शिक्षित महिलाओं को कामकाजी महिला माना जाता है।''(2) डॉ0 रोहिणी अग्रवाल कामकाजी महिलाओं को परिभाषित करते हुए कहती हैं कि – ''आर्थिक दवाब व शिक्षा के कारण ये नारियां घर से बाहर जाकर नौकरी करती हैं।''(3)

कामकाजी शब्द काम + काजी दो शब्दों से मिलकर बना है। काम शब्द कर्म, कम्म, काम से बना है तथा काज शब्द कार्य, कारक, काज से मिलकर बना है। इससे स्पष्ट होता हे कि अर्थ पर बल देने के लिए यहाँ एक अर्थ के दो शब्दों का प्रयोग किया गया है। अंग्रेजी में कामकाजी शब्द का पर्यायवाची शब्द है 'वर्किंग'। वर्किंग के मूल में है 'वर्क' शब्द का 'अर्थे' हैं। बौद्धिक तथा शारीरिक क्षमताओं का उपयोग करके जीविकोपार्जन के लिए किया जाने वाला काम। इससे स्पष्ट होता है कि जीविकोपार्जन के लिए किये जाने वालों किसी भी काम को 'कामकाज' कह सकते हैं। ''अर्थोपार्जन करने वाली महिलाएं ही कामकाजी महिलाएं हैं।''[(4)]

इस प्रकार समझा जा सकता है कि वे नारियाँ जो किसी भी कारणवश, परिस्थितिवश अर्थोपार्जन के लिए काम करती हैं वे कामकाजी महिलाएं कहलाती हैं। किसी भी महिला के कामकाजी रूप को धारण करने के पीछे अनेक कारण हो सकते हैं। जिसमें सर्वप्रथम परिवार की आर्थिक स्थिति को माना जा सकता है। पति का व्यसनी होना, कामचोर या निकम्मा होना ऐसी दशा में परिवार के सरंक्षण के लिए महिला कामकाजी महिला की भूमिका का निवर्हण करने की मजबूर हो जाती हैं लेकिन परिवार की संरक्षक होने के बावजूद भी परिवार में उसका स्थान गौण ही रहता है। पति अपनी नाकामयाबी को छुपाने के लिए हर रोज घर में एक नया तांडव करता है, अपनी कमजोरी को छिपाने के लिए उसका नारी पर हाथ उठाना, उसे झगड़ना, गाली गलोच करना, अपना अधिकार व उसकी विवशता मानता है।

नासिरा शर्मा कृत 'शाल्मली' इसका उदाहरण है – ''इस कमाई पर इतराती हो? यही बताना चाहती हो कि तुम ग्रेट हो, मैं पोजीशन में तुमसे कम हूँ? उछलकर बिस्तर पर बैठते हुए नरेश गरजा।''[(5)] इस तरह से आर्थिक मजबूरियों की वजह से आर्थिक क्षेत्र में

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

भारतीय नारी ने अवश्य पदार्पण किया है, परन्तु समानता की भावना के अभाव में वे अपने को असुरक्षित महसूस करतीं हैं। स्त्रियों को व्यवहार में समान पारिश्रमिक तथा समान अधिकार प्राप्त करने के लिए बहुत कठिनाई उठानी पड़ती है। इतना ही नहीं अनेक संस्थाओं में समान काम के बावजूद स्त्रियों को पुरूषों की अपेक्षा कम वेतन और भत्ते दिये जाते हैं।

मध्यवर्गीय कामकाजी नारी जो अंदर ही अंदर अपने अन्तर्मन के अनेक प्रश्नों से झूझती रहती है। जागरूकता के कारण वह आज समाज में अपना पुरूष के बराबरी का अधिकार व सम्मान पाना चाहती है जिसके लिए वह कामकाज का रास्ता चुन आर्थिकता को अपना संशाधन बनाती है। वह अपनी अलग पहचान बनाना चाहती है। वह जानती है कि अलग पहचान का यह रास्ता चुनौतीपूर्ण होगा लेकिन चुनौतियों से डरकर वह हार मानने को तैयार नहीं है। मध्यवर्गीय नारी शिक्षित होने के कारण चिन्तनशील है यही वजह है कि आज वह अपनी स्थिति, परिस्थिति का आकलन करना बरखूबी जानती है। वह पुरूष के समान शिक्षा ग्रहण कर पुरूष अनुगामिनी न बनकर उसकी सहगामिनी बनना गौरव मानती है जो उसे कामकाजी बनने के लिए प्रेरित करता है। डॉ0 रोहिणी अग्रवाल के मतानुसार – ''मध्यवर्गीय नारी ने सिद्ध कर दिया है कि मात्र आर्थिक स्वतंत्रता से समाज में नारी की स्थिति मे सुधार नहीं हो सकता। इसके लिए अनिवार्य है, नारी में शिक्षा, जागरूकता एवं अपनी स्थिति पर विचार करने की क्षमता। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण है उदार माहौल, लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था जो नारी को न केवल आगे बढ़ने को छूट दे बल्कि उसे कुछ अधिकार देकर प्रोत्साहित करे।''[6]

विकास व परिस्थिति की इसी डगर पर चलते–चलते वह बीसवीं शताब्दी में पहुंचते–पहुंचते जागरूकता का प्रतीक बन जाती है। आज की नारी अपने गुणों व संस्कारों

को संगठित कर बहुत कुछ करने को तत्पर है। आज की नारी पति की परछाई न बनकर समाज में अपनी एक अलग पहचान बनाने के लिए लालायित जान पड़ती है। आज वह अपने व्यक्तिगत निर्णय खुद लेना चाहती है। खुद ले रही है। आज समाज में उसके लिए क्या अच्छा है? क्या बुरा है? इससे वह भलीभांति परिचित हो गई है।

इस तरह से नारी, आधुनिक नारी, कामकाजी नारी, स्वाभिमानी नारी, स्वतंत्र नारी एक नए स्वरूप को धारण करने का सफल प्रयास कर रही है लेकिन उसके सामने इस स्वरूप की प्राप्ति के अवसर कम है क्योंकि इस स्वरूप से दूर करने वाले कारण अधिक हैं जिनमे सबसे पहला दाम्पत्य जीवन। जिसमे वह पति से समकक्षता का भाव चाहती है लेकिन पुरूष इसे मानने को तैयार नहीं है – ''अभी केवल पचास प्रतिशत पति का पत्नी को अपने समकक्ष मानने को तैयार नहीं। जबकि सत्तर प्रतिशत नारियों में पति के समान स्थान पाने का भाव है।''[7] इन्हीं कारणों से दाम्पत्य जीवन उन्हें आगे बढ़ने से रोक रहा है। दाम्पत्य जीवन की दूसरी महत्वपूर्ण कड़ी है उनके बच्चे जो कामकाजी महिला के सामने बहुत बड़ी चुनौती हैं। बच्चों को पूरा समय न दे पाने के कारण उसमे कहीं न कहीं एक अपराध बोध पनपता है। जो उसके विकास को मंद बना देता है। सहकर्मियों का विशेष रूप से पुरूष सहकर्मियों का बर्ताव भी उनके अनुरूप न होने के कारण उनके कार्यव्यवहार को प्रभावित करता है। इस प्रकार दोहरे कार्यभार को सम्भालती हुई वह बड़ी सजगता से आगे बढ़ने का प्रयास कर रही है। जिसमें बहुत कुछ हद तक वह कामयाब भी हुई है।

निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि आधुनिक युग में आते–आते नारी की विकास यात्रा काफी अच्छी रही है ''भारतीय समाज विज्ञान अनुसंधान परिषद (ICSSR)'' द्वारा किये गये एक अध्ययन से पता चलता है कि 1971 ई0 में साक्षर महिलाएं 1804 थीं 1983 में 25 प्रतिशत और 2001 की जनगणना के अनुसार 54.16 प्रतिशत हो गई। यानि की देश

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

की साक्षर महिलाएं निरक्षर महिलाओं से अधिक हो गई है। आज वह नारी जो पुरूष पर पूर्णतः निर्भर थी। आत्मनिर्भर होकर अपनी स्थिति को मजबूत कर रही है। उसकी मानसिकता में धीरे–धीरे परिवर्तन हो रहा है – ''अभी तक व्यक्तित्त्व की विराटता और विशिष्टता का जो सर्वाधिकार पुरूषों के पास था वह सही अर्थो में नारियों तक भी पहुँचा।''[8] भारत के संविधान निर्माताओं ने भी स्वीकारा कि राष्ट्र के सच्चे विकास के लिए महिलाओं के साथ लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं बरता जाए और इसी उद्देश्य से संविधान की धारा 14, 15 और 16 में महिलाओं के लिए समानता, स्वतंत्रता और न्याय की पर्याप्त व्यवस्था की गई है। निश्चित रूप से महिलाएं आज समाज की मुख्य धारा से जुड़ रही हैं। आजीविका के हर क्षेत्र में उनका सराहनीय सहयोग देश के मिल रहा है। कर्तव्यनिष्ठा में व किसी से पीछे नहीं हैं परन्तु विकास एक सतत् प्रक्रिया है, अतः उनके योगदान एवं विकास की उपेक्षा सदैव बनी रहेगी।

संदर्भ ग्रन्थः–

1. डॉ0 सुलोचना श्रीहरि देशपांडे, भारतीय समाज में कार्यशील महिलाएं, पृ0सं0 18–19
2. डॉ0 अनिल गोयल हिन्दी कहानी में सामाजिक भूमिका, पृ0 सं0 173
3. डॉ0 रोहिणी अग्रवाल, हिन्दी उपन्यास में कामकाजी महिला, पृ0 सं0 57
4. डॉ0 रोहिणी अग्रवाल, हिन्दी उपन्यास में कामकाजी महिला, पृ0 सं0 57
5. नासिरा शर्मा शाल्मली पृ0 सं0 107
6. डॉ0 सुलोचना श्रीहरि देशपांडे, भारतीय समाज में कार्यशील महिलाएं, पृ0 सं0 31
7. डॉ0 सुलोचना श्रीहरि देशपांडे, भारतीय समाज में कार्यशील महिलाएं, पृ0 सं0 31

8. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, हिन्दी उपन्यास–उपलब्धियां पृ0 सं0 125